Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 4 | ISSUE : 6 | JUNE 2018

जैसलमेर जिले ओरण व खड़ीनो के मध्य पर्यायवरणीय सम्बधो का अध्ययन

नेमीचन्द गर्ग [1]

[1] (सहायक आचार्य भूगोल), एस. बी. के राजकीय महाविद्यालय, जैसलमेर.

ABSTRACT

वैश्विक पर्यायवरणीय चिन्तन आर्थिक विकास व पर्यायवरणीय संरक्षण के मध्य दोनो धाराओ के बीच मे मानव हित के बारे मे सोच रहा है इसलिए सतत पर्यायवरण विकास के साथ आर्थिक विकास का मार्ग प्रस्तत करना चाहता है। जिसे सवंर्धित विकास भी कह सकते है। भारतीय समाज ने अनादिकाल से सवंर्धित विकास की सोच से अपना कर पर्यायवरण को संरक्षित करता रहा है। इसी विचार ने धर्म की आड़ मे प्रकृति संरक्षण के लिए समाज मे ऐसी परम्पराए विकसित की जो कि आज व्याप्त है। समाजिक परम्पराओ मे पर्यायवरण संरक्षण के लिए कोई लिखित सविधान नही अपनाया बल्कि स्थानीय सोच व धार्मिक आस्था के कारण पर्यायवरण के संरक्षण व प्रबंधन करते रहे है।

इसी क्रम मे राजस्थान के पश्चिम भाग महान थार मरूस्थल मे स्थित जैसलमेर मे विपरित भौगोलिक तथा विषम जलवायु क्षैत्र मे जल व वन दोनो महत्त्वपूर्ण कारको समझ कर स्थानीय आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास का मार्ग अपनाया। वर्षा जल के प्रबंधन के लिए तालाब, नाडी, बेरीया तथा पार तथा रणो का निर्माण करवाया तो वनो तथा वन्य जीवो को संरक्षित करने के लिए गोचर भूमि तथा ओरण भूमि को कृषि से अलग कर रखा गया।

जिले के स्थानीय ग्रामीण समाज मे ऐसी परम्पराए विकसित की जिससे आर्थिक हित के साथ पर्यायवरण का भी विकास होता है। ये परम्पराए जल, जमीन, वनस्पति, वन्य जीव जन्तुओ को बचाने स्थानीय समाज मे व्याप्त थी। जैसे गांव का कृषि भूमि खड़ीन, गाव के पशुओ के लिए गोचर भूमि, वन्यजीवो के लिए ओरण तथा पेयजल के लिए पार या तालाब अथवा कुआ इनको संरक्षित करने के लिए समाज के पास कोई लिखित विधान नही था। स्थानीय लोग स्वविवेक व धार्मिक आस्था के कारण पर्यायवरण के संरक्षण व प्रबंधन करते थे। जैसलमेर जिला राजस्थान का ऐसा क्षैत्र है जहां विपरित भौगोलिक परिस्थितियो ने स्थानीय समाज को पर्यायवरण को संरक्षित कर सवंर्धित विकास के मार्ग प्रस्तत किया है जिसके उदाहरण ओरण व गोचर भूमि तथा खडीन कृषि स्वरूप है।

Keywords: समाजिक परम्पराए, पर्यावरण सरक्षण, सतत विकास, ओरण, गोचर, खड़ीन

शोध के उद्धेश्य–

1. स्थानीय सामाजिक परम्पराओ की जानकारी तथा प्रकृति के साथ सम्बध

2. ओरण व खड़ीनो के पर्यायवरणीय स्वरूप का अध्ययन तथा स्थानीय समाज का योगदान

3. खड़ीन कृषि तथा ओरण भूमि के पर्यायवरण सम्बध का अध्ययन

साहित्य समीक्षा –

जैसलमेर जिले मे स्थित ओरण पर विभिन्न समाचार पत्रो तथा पत्र पत्रिकाओ मे आने वाले आलेख तथा "आफरी" तथा "काजरी" नामक भारतीय अनुसंधान संस्थानो के शोध मे जिले की विभिन्न ओरण भौगालिक तथा पर्यायवरण स्वरूप प्रकाश डाला है। इसी प्रकार भुवनेश जैन ने अपनी पुस्तक "औरण" मे जिले की विभिन्न ओरण की वर्तमान स्थिति व बदलते स्थिति के बारे मे बताया है। आरण व खड़ीन पर जैसलमेर प्रसिद्ध इतिहासकार नन्दकिशोर शर्मा ने अपनी पुस्तक "जैसलमेर का सामाजिक एव सांस्कृतिक इतिहास" मे विस्तृत विवरण प्रदान किया है। लक्ष्मीकान्त मोहता ने अपनी पुस्तक "तवारिख" मे ओरण भूमि तथा खड़ीन भूमि के ऐतिहासिक स्थिति तथा तत्कालीन गामीण स्वशासन के बारे मे लिखा है।

शोध विधितंत्र –

प्रस्तुत शोध पत्र मे अनुभव आधारित पद्धति को प्रयोग करके जिले के स्थानीय लोगो जानकारी तथा जिले की विभिन्न ओरण तथा खड़ीन क्षैत्रो के भ्रमण से प्राथमिक आकड़ो को सग्रह किया गया है द्वितीय आकड़ो को विभिन्न पुस्तको तथा समाचार पत्रो एव इन्टरनेट के माध्यम से प्राप्त किया गया है। इस शोध मे स्थानीय ग्रामीण समाज मे व्याप्त ऐसी परम्पराए तथा प्रथाओ का उल्लेख किया है जो पर्यायवरण संरक्षण के लिए उत्तरदायी रही है और जिससे आर्थिक विकास का मार्ग प्रसस्त किया है।

शोध समस्या का अध्ययन –

जैसलमेर मे थार के मरूस्थल मे विपरित भौगोलिक तथा विषम जलवायु क्षैत्र मे जल व वन दोनो महत्त्वपूर्ण कारक है स्थानीय समाज ने पर्यायवरण को संरक्षित करते हुए वर्षा जल व वन तथा वन्य जीवो को संरक्षित करने का प्रबंधन किया है प"ुपालन के गोचर भूमि तथा वन्य जीवो के ओरण भूमि को रखा गया इन दोनो के जल प्राप्ति हेतु कृषि व पेयजल हेतु खड़ीनो तथा नाडी, तालाब और छोटे पोखरो का निर्माण किया। संभवत: दोनो प्राकृतिक स्त्रोत एक दूसरे के पूरक है क्योकि अधिकांश ओरण स्थानीय खड़ीनो के समीप है इसी शोध समस्या का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

अ.जैसलमेर जिले मे ओरण –

जैसलमेर जिले मे ओरण को विकसित करने स्थानीय राजशाही प्रशासन तथा धार्मिक आस्था का महत्त्वपूण योगदान रहा है। स्थानीय राजाओ ने तत्कालीन अन्तराष्ट्रीय व्यापार मार्ग तथा पशुपालन एव कृषि के आर्थिक दृष्टिकोण के साथ जल तथा वन सम्पदा को बचाने का कार्य किया है। क्योकि अधिकांश ओरण तत्कालीन राजाओ के द्वारा विभिन्न गांवो के प्रदत है जिसका उल्लेख विभिन्न ताम्रपत्रो तथा गोर्वधनो पर किया गया है मोकला स्थित विकनसिह की ओरण (भाटी वंश से संम्बधित) हो या जानरा मे मालण बाई (परमार वंश से संम्बधित है जो स्थानीय गोर्वधन पर लिखित) इसी प्रकार किशनधाट के समीप गोचर भूमि (भाटी वंश के मूलराज द्वितीय के समय प्राप्त गोर्वधन तथा उसके समीप गाय व बछडे की मूर्ति)के लिए की ओरण के प्रति सदभाव व वन तथा वन भूमि संरक्षित करने के लिए कार्य किये गये है।

राजतंत्र मे दिवान नथमल ने जंगली बेर के वृक्ष के काटने पर समाज द्वारा दण्डस्वरूप सोने के वृक्ष को बना कर भेट करना। वही जंगली जीव अथा जीव को जाने अनजाने मे हत्या के पश्ताचाप मे सोने अथवा चांदी के जीवो को मन्दिर मे भेट करना ये सभीं स्थानी पारम्परिक समाज तथा ग्रामीण प्रशासन की जीव तथा उसके पर्यायवरण को बचाने के लिए सामाजिक परम्पराए है।

यह अनुठी परम्परा जो वर्तमान समय मे भी व्याप्त है जिसे ओरण अर्थात देवभूमि या हम आरण को पितृभूमि व मातृभूमि भी कह सकते है ओरण को पितृभूमि और मातृभूमि कहने का कारण यह है कि स्थानीय तत्कालीन ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार कृषि व पशुपालन था जिसमे अकाल तथा जल की कमी के कारण कृषि के बजाय पशुपालन लाभकारी रहा है। पशुओं से भोजन के रूप में दूध–दही–छाछ व घी आदि मिल जाता था एवं उनके क्रय–विक्रय से अन्य पूर्तियां भी हो जाती थी। पशु इन्हीं ओरणों के विशाल चरागाहों पर निर्भर थे ,और इस मरुप्रदेश में ओरण स्थानीय जन के पालन–पोषण का मुख्य साधन है और जीवन का आधार है। ओरण शब्द की उत्पत्ति अरण्य शब्द से हुई है अरण्य एक संस्कृत शब्द है अरण्य अर्थात वनभूमि या वनक्षेत्र और ओरण वनों से घिरे विशेष क्षेत्र को ही कहते है जबकि स्थानीय जनमानस की मान्यता थी कि देवों के कृपा ऋण से और माता–पिता के पालक ऋण से, उऋण होने के लिए स्थानीय लोग अपनी कुछ भूमि को दान कर वहाँ पेड़–पौधें लगाने की परम्परा को बनाए रखने की वनस्पतियों का बीजारोपण करते थे और कुए एवं तालाब भी बनवाते थे जिससे कि बेजुबान पशु–पक्षियों को भोजन–पानी मिल सकें उनका भरण–पोषण हो सकें। ये एक तरीका था माता–पिता और देवों के ऋण से मुक्त होने का इसी ऋण से उऋण शब्द निकला और उसी उऋण शब्द से ही ओरण शब्द की उत्पत्ति हुई।

ओरण भूमि पर केवल बेजुबान पशु–पक्षियों का ही हक होता था, इंसान उस भूमि पर खेती नही कर सकता था और न ही निजी कार्यो के लिए ओरण भूमि का उपयोग होता था। जल व फल के उपयोग की छूट थी क्योंकि ओरण ही जल के प्रमुख केंद्र थे इस मरुप्रदेश के विशालकाय ओरणों में तो छोटे–मोटे नदी–नाले भी बहते है

विशालकाय तालाब और मीलों में फैले उनके आगोर हमें ओरणों में ही देखने को मिल सकते है, ओरण जलसंरक्षण के प्रमुख केंद्र है और जहाँ जल होता है वहाँ जीवन होता है फल होते है ओरण संस्कृति अधिकतर राजस्थान के पश्चिमी भूभाग में देखी गई है।

ओरण जलसंरक्षण के प्रमुख केंद्र है और जहाँ जल होता है वहाँ जीवन होता है फल होते है. ओरण संस्कृति अधिकतर राजस्थान के पश्चिमी भूभाग में देखी गई है वैसे कुछ उदाहरण सम्पूर्ण राजस्थान में भी पाए गए हैं। लेकिन अधिकता राजस्थान के पश्चिमी भूभाग में ही है. वैसे तो वन क्षेत्र भारत के हर कोने में पाए जाते है कुछ बड़े तो कुछ छोटे. लेकिन उनमें नियम और कायदे ओरण जैसे नही है और नही ओरणों जैसी आस्था उन वनों से वहाँ बसने वाले सामान्य जन की है, इसी लिए ही ओरण को देवभूमि का दर्जा दिया गया है। इन ओरणों में पेड़ काटना तो दूर की बात है लोग पेड़ लगाते है, उन्हें देव मानकर पालते है, हालांकि सुखी लकड़ी जो स्वतः पेड़ों से भूमि पर गिरती है, उसका उपयोग भी ईंधन के रूप में अधिकतर ओरण क्षेत्र में ही होता है, घर कोई नही ले जाता है। इस काम के लिए न तो कोई सरकारी आदेश है और न ही वन विभाग की फ़ौज और ये ओरण राजस्थान के पश्चिमी भूभाग में स्थित है जहाँ बारिश कम होती है तो पेड़–पौधे भी कम है ऐसे में वनों की लकड़ियों की कमी से यहाँ का जन सदैव से जूझता रहा है फिर भी उन्होंने ओरण क्षेत्र के पेड़ और पौधों का कभी उपभोग नही किया घर बनाने में व घरेलू सामान बनाने में और विशेषकर ईंधन के रूप में लकड़ी बहुत काम आती है फिर भी स्थानीय जन ओरण की लकड़ी का उपयोग नही करता है क्योंकि यहाँ के लोगों में ओरण क प्रति गहरी आस्था है देशनोक बीकानेर में स्थित करनी मातामंदिर की ओरण परिक्रमा या सांवता जैसलमेर मे स्थित देगराय की परिक्रमा इसी आस्था का प्रतीक है. राजस्थान के पश्चिमी भूभाग के लगभग हर गांव में छोटा–मोटा ओरण तो अवश्य है जो या तो किसी कुल देवता या कुलदेवी के नाम से है या इष्टदेव के नाम से है या लोक–देवताओं के नाम से है इन्हीं कारणों से ओरणों के प्रति आस्था भी है और अनुशासन भी जो इन बहुउपयोगी ओरणों के संरक्षण के लिए आवश्यक है और पूर्वजों की महान सोच को दर्शाता है. स्थानीय भाषा में ओरण को औण भी कहते है जिसमे आंण अर्थात सौगंध दी जाती है अर्थात स्थानीय जन मानस देवो अथवा देवता औरण को हानि न पहुचाने तथा उसकी रक्षा की सौगंध लेता है यही कालान्तर मे जा जनअनुषासन के रूपम` कार्य करता है किसी देवी–देवता के ओरण में पत्ता, डाली या पेड़ तोड़ने पर देवी–देवता कुपित हो जाते हैं, लेकिन कभी उसका कोई साक्ष्य नहीं देखा होगा। जैसलमेर के दिधू–आस्कन्द्रा गाँवों में स्थित देवी स्वांगियाँ जी के ओरण में आप इस बात का सबूत देख सकते हैं। पाबूजी, रामदेवजी, तेजाजी, झरड़ाजी, गोगाजी, आईनाथजी और अन्य स्थानीय देवी–देवता व जूंझार–भोमियों (गायों व भूमि की रक्षा लिए हुए शहीद)के नाम पर ये ओरण संरक्षित होते थे

ओरण मात्र जमीन का टुकड़ा नही है, बल्कि ओरण सवंर्धित पर्यायवरण पोषण का आधार है जो स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र तथा सामाजिक व आर्थिक विकास के मार्ग को विकसित करता है ओरण पशुधन के लिए विशाल चारागाह है राजस्थान क गांवों में पर्यावरण संरक्षण का अपना लौकिक तरीका था। देवी–देवताओं के नाम से ओरण (बन–भूमि) छोड़े जाते थे इसलिए लोग उन जगहों से तिनका भी नहीं तोड़ते थे, लकड़ी काटने का तो सवाल ही नहीं उठता था इसी तरह गायों के चरने के लिए गोचर भूमि और उनके बैठने के लिए खैड़ा (गाँव के चारों ओर की जमीन) और तांडा (कुओं व तालाबों के पास की जमीन) होता था तालाबों के आगोरों (पानी आवक का क्षेत्र) में कोई भी शौचादि नहीं जा सकता था बच्चों के खेलने और बुजुर्ग लोगों के बंतळ–हथाई के लिए खुला स्थान बाखळ होता था इन सभी स्थानों पर कोई न तो बस सकता था और न ही कोई सार्वजनिक स्थान खड़ा किया जा सकता था ब्रिटिश संविधान की तरह गाँवों का अपना अलिखित संविधान होता था इस संविधान का उल्लंघन करनेवाले को दंडित किया जाता था

ओरणों में ही विशाल तालाब है केवल पेयजल प्रयोजन होते है वो नाडी, नाडा, पार तथा तलाई नामो से जाने जाते है यही जैसलमेर नगर से लगभग 25 से 30 किमी परिधी जहां इन विशाल तालाबो का उपयोग पेयजल के साथ कृषि कार्य के लिए होता वहां खड़ीनो का विकास होता हैं । इनके विशाल आगोर अथवा कैचमेण्ट क्षेत्र ओरणो के वृक्षो से सुरक्षित है इस कारण ही साल भर भरे रहते है जिनसे आमजन और पशुधन एवं वन्य जीव जल पीते है इन्ही तालाबों से कुएं भी रिचार्ज होते है जो अकाल के समय जल देते है। इन्हीं ओरणों में वर्षा ऋतु में बहने वाल छोटे छोटे नाले है, जो खेतों को जल से भर खडीनों का रूप देते है जिनसे किसान अच्छी पैदावार लेते है। खडीनों के गेंहू और चने बहुत प्रसिद्ध है ऐसे बहुत से छोटे छोटे नाले मिल छोटी नदिया बनाते है जो स्थानीय कृषि कुओं को रिचार्ज करती है और आज कल ये नदिया नलकूपों को रिचार्ज करने में सहयोगी है जिनसे खेती होती है और किसान की आर्थिक स्थति सुधरती है. ये ओरण सैकड़ो प्रकार के वन्यजीवों के घर है जिनका प्रकृति के सौंदर्य में बहुत बड़ा रोल है ओरणों में फैले हजारों लाखों पेड़ वर्षा को तो आमत्रित करते ही है हमें ऑक्सीजन के रूप में शुद्घ हवा देते है वायुमंडल के ताप को भी ये पेड़ नियंत्रित करते है, पेड़ो से सुख कर गिरी लकड़ियां ईंधन के रूप में काम देती है इन पर लगने वाले फल मानव की उदर पूर्ति में काम आते है, बहुमूल्य और दुर्लभ जड़ीबूटियां भी इन ओरणों में पाई जाती है जो मानव जीवन में सहायक है

जैसलमेर के कुल 38401 वर्ग किमी क्षेत्र मे 411.91 वर्ग किमी क्षेत्र मे ओरण भूमि संरक्षित है। अर्थात कुल भूमि का 10 प्रतिशत हैं। जैसलमेर जिले के फतेहगढ तहसील के 35 गांवो मे 5894 हेक्टर, जैसलमेर तहसील के 39 गांवो मे 5444 हेक्टर, पोकरण तहसील के 90 गांवो मे 29853 हेक्टर भूमि ओरण की है इसी प्रकार फतेहगढ के 35 इन ओरण गांवो मे से 28, जैसलमेर के 39 इन ओरण गांवो मे से 31, पोकरण के 90 इन ओरण गांवो मे से 28, मे ओरण तथा गोचर भूमि दोनो ही है जिले मे 40921 हेक्टर भूमि ओरण तथा 42706 हैक्टयर भूमि गोचर है। इन ओरणो मे पारम्परिक जल स्त्रोता की स्थिति का आकलन करे तो फतेहगढ के 35 इन ओरण गांवो मे से 23, जैसलमेर के 39 इन ओरण गांवो मे से 18, पोकरण के 90 इन ओरण गांवो मे से 57 गांवो मे पारम्परिक जलस्त्रोत आज भी मौजूद है अर्थात 164 ओरणो मेसे 98 ओरणो मे जलस्त्रोत है। इन पारम्परिक जल स्त्रोतो मे अधिकांष मे तालाब, पार, बेरिया व कुए मौजूद है इन ओरणो तथा इन स्थित जल़स्त्रोतो का नाम स्थानीय देवी देवता के नाम पर है। और इन जल़स्त्रोतो के समीप पाल अथवा सीमा पर स्थानीय देवी देवता के मन्दिर अथवा स्तम्भ लगा रहा है। जहां पर ग्रमीण अपनी श्रृद्या से पूजा याचना करते है। इन ओरण का सम्बध पशुधन व प्राकृतिक वनस्पति से करे तो जिले के सम्पूर्ण प्राकृतिक वनस्पति का 71 प्रतिशत भाग, पशुधन मे 47 प्रतिशत गाये, 50 प्रतिशत भेडे, 45 प्रतिशत बकरी तथा 42 प्रतिशत ऊँट पाये जाते है। इसके अलावा जिले की 52 प्रतिषत जनसंख्या पाई जाती है।

इसी प्रकार पर्यायवरणीय संरक्षण दूसरी तकनीक खड़ीन है जो ओरण के साथ प्रत्यक्ष जुड़ी हुई है संभवतः ओरण खड़ीन से पहले विकसित होते है क्योकि प्राकृतिक वनस्पति से वर्षा तथा उपजाऊ भूमि का विकास हेाता है। खडीन कृषि मे जैसलमेर जिले मे अल्पवर्षा व विषम भौगोलिक परिस्थितियो के कारण स्थानीय जीवनयापन के लिए स्थानीय प्राकृतिक संसाधनो मे महत्त्वपूर्ण जल का प्रबंधन विवेक तथा बुद्धि के साथ किया है जिसमे प्रवाहित जल वर्षा सुव्यस्थित प्रबंधन करके कृषि तथा पेयजल के उपयोग मे लाने के तकनीक को प्रचलित किया है जिसे स्थानीय भाषा मे खडीन कहा जाता है।सीमित एवं कम वर्षा तथा रेतीली मिट्टी के कारण यहाँ कृषि जल एवं पेयजल की समस्या हमेशा बनी रहती है। यहाँ की जलवायु एवं वर्षाचक्र को समझते हुए अपने जनजीवन को प्रकृति के अनुसार ढाल लिया और आजीविका चलाने के इस प्रकार की तकनीके विकसित की गई। खेती के लिये वर्षाजल संरक्षित करने के लिये कुछ परम्परागत ढाँचे (खड़ीन) बनाए गए जिससे आज भी अकाल के वषो में भी फसल प्राप्त हो जाती है। इन खड़ीनो से अतिरिक्त जल को निकाल कर नमकीन झीलो मे प्रवाहित कर दिया जाता है जिसे "रण" कहते है जो कि जो कि भूमि के आन्तरिक जलभरण का स्त्रोत बनता है। अर्थात प्रवाहित जल के सदुपयोग के साथ भूमिगत जल मे वृद्धि जैसी संकल्पना विकसित की गई है। पेयजल के लिये वर्षा जल संग्रहण संरचनाएँ जैसे टांका, बेरी, नाड़ी आदि हमारे पूर्वजों की देन है। ये सभी परम्परागत तकनीकें उन्होंने स्थानीय जलवायु, मनुष्य की आवश्यकता और सुलभता के आधार पर लोक व्यवहार एवं ज्ञान से विकसित की गई।

जैसलमेर जिले मे खड़ीन–

वह कृषि भूमि है जहां पर जलसंरक्षण, जलप्रबधन, भूमिगत जल पुनर्भरण, मृदासरक्षंण व जैविक बीज प्रयोग आधारित सामूहिक कृषि की जाती है, पर्यायवरणीय संरक्षण तथा पारिस्थितिकी विकास का मूल भावना का विकास करते हुए सामाजिक सामूहिकता के रूप मे, जैसलमेर जिले के विभिन्न भागो मे की जाने वाली कृषि है। यह जिले के रेतीले टील्लों के बीच–बीच जिला मुख्यालय के 25 से 30 किमी परिधि मे जुरासिक कालीन पथरीला भूमि है जिसमे कि 200 मी से 300 मीटर उचाई की पहाडिया है जिसे स्थानीय भाषा मे मगरा कहा जाता है। इन मगरो से वर्षा काल मे बहते हुए जल के प्रवाह मार्ग मे ढालू क्षैत्र मे पत्थरो अथवा मिटटी से बांध कर अथवा मेड. बन्दी करके क्रमानुसार, कृषि भूमियो पर जल को इकट्ठा किया जाता है, इसके पश्चात् रबी तथा खरीफ फसलों की पैदावार की जाती है, जिसे स्थानीय भाषा मे खडीन कहा जाता हैं। इस पारम्परिक कृषि का विकास जैसलमेर जिले मे लगभग 15 सदी मे पालीवाल कृषक बाहमणो के द्वारा किया गया था। खड़ीन का निर्माण सामान्यतः खरीफ या रबी की फसल कटने के बाद दिसम्बर और जून में किया जाता है क्योंकि इस दौरान किसान के पास अतिरिक्त समय होता है। मरुस्थल में जल संरक्षण की तकनीकों का विवरण बिना खड़ीन के नाम से अधूरा है। खड़ीन मिट्टी का एक बाँध है जो किसी ढलान वाली जगह के नीचे बनाया जाता है जिससे ढलान पर गिरकर नीचे आने (बहने) वाला पानी रुक सके। यह ढलान वाली दिशा को खुला छोड़कर बाकी तीन दिशाओं को घेरती है। खड़ीन से जमीन की नमी बढ़ने के साथ–साथ बहकर आने वाली खाद एवं मिट्टी से उर्वरकता में भी वृद्धि होती है। नमी की मात्रा बढ़ने से एक वर्ष में दो फसलें लेना भी सम्भव हो जाता है।

खड़ीन एक पहाड़ी क्षैत्रो मे वर्षा जल को रोक कर ढाल वाले क्षैत्रो मे कृषि करने की विशेष तकनीक है जिसे किसी भी आम जमीन पर नहीं बनाया जा सकता। बढ़िया खड़ीन बनाने के लिये अनुकूल जमीन में दो प्राकृतिक गुणों का होना आवश्यक है। ऐसा आगोर (जल ग्रहण क्षेत्र) जहाँ भूमि कठोर, पथरीली, एवं कम ढालदार हो, जिससे मिट्टी की मोटी पाल बाँधकर जल को रोका जा सके। खड़ीन बाँध के अन्दर ऐसा समतल क्षेत्र होना चाहिए जिसकी मिट्टी फसल उत्पादन के लिये उपयुक्त हो। खड़ीन एक

अर्द्धचन्द्राकारनुमा कम ऊँचाई (4 फीट से 5 फीट) वाला मिट्टी का एक बाँध होता है। यह जल की ढाल की दिशा के विपरीत बनाया जाता है, जिसका एक छोर वर्षाजल प्राप्त करने के लिये खुला रहता है। किसी भी खड़ीन को बनाने में तीन तत्व महत्त्वपूर्ण होते हैः–

1. पर्याप्त जल ग्रहण क्षेत्र
2. पर्याप्त ढाल वाला क्षैत्र
3. खड़ीन बाँध अर्थात पानी रूकावट क्षैत्र
4. अतिरिक्त जल निकास क्षैत्र

जैसलमेर मे कोई बारहमासी नदी नहीं है केवल बरसाती नदियाँ और वेा भी केवल उच्च भूमि क्षैत्रो और समतल भूमि पर तथा रेत के धोरा मे स्थानीय आवश्यकता ने बहते पानी तालरों में रोका जा सकता है। ऐसे सब स्थानों पर खड़ीन बनाई जा सकती है। खड़ीन अस्थाई तालाब है, इनमें पानी कम गहरा होता है। दो ओर मिट्टी की पाल बनाकर तीसरी ओर पत्थर की मजबूत चादर बनाई जाती है। कहीं–कहीं चादर खड़ीन बनी पाल के बीच में होती है। पानी के प्रवाह और ढलान के हिसाब से चादर बनती है। खड़ीन की पाल ही घोरा कहलाता है। खड़ीन पाँच–सात किलोमीटर तक लम्बी हो सकती है। पानी अधिक बरसे तो चादर से बाहर निकलकर दूसरी–तीसरी खड़ीनों को भरता है। इस धरती पर कई इलाकों में ऐसी खड़ीन हैं। काक नदी के किनारे बनी ऐसी खड़ीनें हैं जो दूर–दूर जाती हैं। नभड़ूँगर से डेढ़ा गाँव तक ऐसी कई खड़ीनें हैं। रियासत की पुरानी राजधानी लौद्रपुर से नीचे बहने वाली नदी खड़ीनों को भरती हुई गेहूँ के सैकड़ों कोठारों को भरने में समर्थ थी खड़ीन में तीन–चार माह तक विश्राम करती हुई नदी धीरे–धीरे सूख जाती है और खड़ीन की भूमि में नमी पैदा करती है। इसी नमी के बल पर खड़ीनों में गेहूँ, चना, सरसों आदि की फसल बोई जाती है। मौसम अनुकूल हो तो एक मन, पचास साठ मन तथा कई बार सौ गुनी पैदावार भी हो जाती थी। यह सब इस धरती की उर्वरा शक्ति पर निर्भर था। इस धरती पर इतनी खड़ीनें बनाई गई थीं कि एक समय इस क्षेत्र का नाम ही खड़ीन पड़ गया था।

खडोन 150 से 500 मीटर लम्बा अथवा 2 से 5 वर्ग किलो मीटर क्षैत्र मे फेला हो सकता है। इसका आकार साधारणतया उस क्षेत्र की औसत वर्षा, आगोर का ढाल तथा भूमि की गुणवत्ता पर ही निर्भर करता है। खड़ीन बाँध (पाल) के ऊपर (टॉप) की चौड़ाई 1 से 1.5 मीटर तक तथा बाँध की दीवार में 1:1.5 का ढाल होता है। जिस स्थान पर पर्याप्त जल आकर रुकता है उसे 'खड़ीन' (समरजिंग एरिया) और पानी रोकने वाले बाँध को 'खड़ीन बाँध' कहा जाता है। अतिरिक्त पानी के निकास के लिये बनाई गई संरचना को 'नेहटा' कहते हैं। खेती लायक पानी एकत्र करने के लिये खड़ीन और आगोर का आदर्श अनुपात 1:5 का होना चाहिए।

जैसलमेर जिले के कुल क्षेत्रफल 38,40,100 हेक्टेयर है जिसमे लगभग 28,400 हेक्टेयर पर खडीन भूमि का कब्जा ह । यहां पर 524 से अधिक खडीन निम्न भागो मे स्थित है जो कि निचली पहाड़ियों से घिरा हुआ है इसके काजरी ने अलावा, 24,448 हेक्टेयर भूमि को संभावित जलगहण क्षेत्र के रूप में पहचाना गया है जहां औसत वार्षिक वर्षा को आधार मानते हुए 412 हेक्टयर क्षेत्र वाले खडीनों का चिन्हित किया है। जैसलमेर तहसील के रूपसी और बुज खडीन जैसे कुछ महत्त्वपूर्ण है जो कि अपने विशाल क्षेत्र तथा पैदावार और पारिस्थिति तंत्र मे योगदान के लिए माने जाते है। जो खडीन उपरी क्षेत्रो स्थित है वहां कें संग्रहित जल का नहरों द्वारा निचली खडीनों को खेती के लिए आपूर्ति की जाती है। पर्याप्त वर्षा वाले वर्ष में लगभग सभी खडीनों की खेती हो जाती है। बड़े खडीन भुज (1600 हेक्टेयर), ओय्या (800 हेक्टेयर), कोमल (800 हेक्टेयर), जैतसर (60 हेक्टेयर), पाटन (143 हेक्टेयर), ओलाबुंध (125 हेक्टेयर), सारण (110 हेक्टेयर), नोवाडा (96) उगाता (80 हेक्टेयर), मुंगरी (80 हेक्टेयर), सागर (76 हेक्टेयर), बरखानवाला (73 हेक्टेयर), कांसी प्रथम (88 हेक्टेयर) और लूनाखुर्द (83 हेक्टेयर)। ये खडीन अत्यधिक उत्पादक हैं। बताया गया है कि अनुकूल वर्षा वाले वर्षों में किसानों द्वारा प्रति हेक्टेयर 10 से 40 क्विंटल गेहूं का उत्पादन किया गया है। ये खादीन बिना सिंचाई के रबी फसलों के महत्वपूर्ण स्रोत है

ओरण व खड़ीन के मध्य सम्बध –

- **ओरण के माध्यम से खड़ीन भूमि मे उर्वरता मे विकास –**

  जैसलमेर जिले मे अधिकांश ओरण खड़ीन के केचमेण्ट क्षेत्रो मे स्थित है जहां से वर्षा जल प्राप्त होता है इन ओरण स्थित पेड़ पोधो की पत्तिया तथा जीवो के अपशिष्ट भाग वर्षा जल के साथ प्रवाहित होकर खड़ीनो की भूमि पर एकत्रित होते है और खड़ीनो मे पानी के रूकने के साथ हो पानी म गल कर मिटटी को उपजाउ बनाने मे सहायक हेाते है जिससे खड़ीनो को जैविक खाद मिलती रहती है इसी कारण इनमे जैविक कृषि की जाती है।

- **ओरण के द्वारा खड़ीनो के आगोर अथवा केचमेण्ट क्षैत्र का विकास एव सुरक्षा –**

  जैसलमेर क्षेत्र में ओरणेा से खड़ीनो के आगोर क्षैत्र मे वृद्धि तथा विकास हेाता है जैसे जैसे पेड़ो की श्रृखला मे वृद्धि होती जाती है स्थानीय जनमानस भी उस क्षैत्र मे अन्य उपयोग के लिए छोड देता है और क्षेत्र का विस्तार होता जाता है।

- **ओरण से खड़ीनो की पाल की सुरक्षा –**

  खड़ीनो की पाल अथवा बाध पर स्थानीय वृक्षो की कतार होती है जो मिटटी से बने होते है विशाल वृक्षो की जड़े इन बांधो को सुरक्षा तथा मजबूती प्रदान करती है जिससे पानी का रिसाव भी नही होता है और अतिरिक्त पानी दोहन भी इन पेड़ो के द्वारा सोख लिया जाता है।

- **खडीनो के माध्यम से वन्य जीवो को पेयजल तथा भोजन की प्राप्ति –**

  ओरण स्थित वन्य जीव जन्तु एव पेडो को वर्ष भर पेयजल तथा भोजन के खड़ीन भोजन श्रृखला का निर्माण करते है इसमे जलचर तथा उभयचर प्रमुख है खड़ीनो मे कृषि लेने के पश्चात अन्न के बीजो पर सभी पक्षी तथा चुहे आश्रित रहते है साथ पेड़ो से प्राप्त फल तथा कन्दमूल स्वस्थ भोजन श्रृखला विकसित होती है साथ प्रवासी पक्षिओ के शीतकाल मे रूकने का प्रमुख आसरा भी है।

- **ओरण को खड़ीनो से जल की प्राप्ति –**

  खड़ीनो मे अगस्त से दिसम्बर माह तक पानी रहता है ये जल लगभग 6 माह तक स्थानीय क्षैत्र की भूमिगत जल पुनर्भरण के रूप मे भूमि मे समा जाता है इस जल का उपयोग ओरणो के पेड. गर्मी की ऋतु मे करते है जिससे वर्ष भर हरियाली बनी रहती है।

- **ओरण से नदियो तथा नालो के किनारो का संरक्षण –**

  अधिकांश ओरण से खड़ीनो को जल की प्राप्ति होती है यहां स्थित नदी –नालो के किनारो पर प्राकृतिक रूप अथवा मानव के द्वारा वृक्षो की कतारे लगाई गई जो कि नदी के किनारो तथा तटबंध को सुरक्षित रखती है जिससे तेज बहाव के समय भी इनके तट टूटते नही है।

- **ओरण के द्वारा खड़ीनो मे आने वाले प्रवाहित वर्षा जल के वेग मे कमी –**

  खड़ीनेा मे आने वाले जल के अतिरिक्त प्रवाह को रोकने के लिए ओरण के पेड़ तथा पौधे महत्त्वपूर्ण कार्य करते है ये वृक्ष जहां मिटटी के अपरदन को रोकने मे सक्षम होते है वही वर्षा जल की गति को कम करने मे सहायक होते हैं। इन वृक्षो के द्वारा अवरोध से स्थानीय भागो मे कटाव भी होता है और वहां पर रहने वाले जीवो को ओरण मे जल की आपूर्ति हो जाती है।

- **ओरणो से खड़ीनो के अतिरिक्त जल का भूमिगत अवशोशण होता है जिससे बाढ की संभावना नही रहती है –**

  ओरणो के द्वारा अवरोध बनने तथा जल के रूकावट के कारण जल के वेग मे कमी आती है तथा अतिरिक्त जल का अवशोषण होता है जिससे खड़ीनो पर जल का दबाव नही पड़ता है और बाढ आने की आ"ांका भी कम हो जाती है।

- खडीनो के अतिरिक्त जल नमकीन रणो प्रवाहित किया जाता है जिससे ऐसे ओरण निकट खुली जलरा"ि के समीप नही होते है उन ओरण के जीवो तथा पेड़ पोधो को जल की प्राप्ति होती रहती है साथ ही वहां पर स्थित कुओ तथा बेरियो को जल प्राप्त होता है जिसे रेजवानी पानी कहा जाता है जिसका उदाहरण ब्रहमसर मे स्थित कुण्ड ओर बावड़ियां है जिससे अकाल क समय तथा वर्ष भर जल की आपूति होती है।

- **प्रवासी पक्षिओ के लिए उपयुक्त स्थल –**

  अन्तराष्ट्रीय स्तर पर सितम्बर से फरवरी माह तक साईबेरियन क्रेन जैसे हजारेा पक्षियो का स्थानान्तरण अथवा माईग्रे"ान होता है भारत मे ये ओरण व खड़ीन ऐसे स्थल है जहां पर ये पक्षी रूकते है और भोजन तथा अन्य गतिविधिया करते है जिससे इनके अपशिष्ट से स्थानीय भूमि को उर्वरता तथा स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र का विकास होता है।

सुझाव एव निष्कर्ष–

जैसलमेर जिले के इन पर्यायवरण संरक्षण के समाज ने ऐसे विधान तथा उपागम दिये जेा किसी संवेधानिक कानून के मोहताज नही है और साथ ही सदियो तक स्थानीय ग्रामीण प्रशासन व अर्थव्यवस्था का आधार रह। इन दोनो प्रमुख उपागमो मे मध्य अन्तरसम्बध भूमिसरक्षण, जलसरक्षंण, भूमिगत जलपुर्नभरण, मिटटी की उर्वरता बढाने,

पेड़ व पौधो को वर्षभर जल आपूर्ति, जीवो के भोजन, भूमि कटाव व बाढ रोकने मे पाया जाता है। इन खड़ीन तथा औरण को संरक्षित करने के लिए संर्वद्यित विकास की अवधारणा को अपनाना होगा ताकि भविष्य के लिए भी उपादेयता रहे।

REFERENCES

1. *मिश्र, अनुपम, (2017), आज भी खरे है तालाब, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, 31–33*

2. *भाटिया, सांगीदान, (2016), जलसंरक्षण नीति एव संस्कृति –मरूधरा के सन्दर्भ मे, साहित्यगार प्रकाशन, जयपुर*

3. *जोशी, महेशकुमार, (2013), थार मरूस्थल की मिटटीयां व उनका वर्गीकरण:, मरू कृषि चयनिका, वार्षिक पत्रिका, केन्द्रीय शुष्क क्षैत्रीय अनुसंधान केन्द्र, जोधपुर।*

4. *बिस्सा, श्यामसुन्दर, (2012), रजत बून्दो मे राजस्थान की जल संरक्षण: सुजस, वार्षिक पत्रिका, राजस्थान सरकार, 88–89*

5. *ओझा, प्रियदर्शी, (2012), पश्चिमी भारत मे जल प्रबंधन मे जल प्रबंधन का अध्ययन, सुभद्रा प्रकाशन एव वितरक, दिल्ली, 72–106*

6. *शर्मा, नन्दकिशोर, (2011), जैसलमेर का सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 48–52*

7. *व्यास, मागीलाल मयंक, (2011), जैसलमेर का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 38–44*

8. *नाटाणी, पी.एन. (2008), जलसरक्षण, समस्या तथा समाधान, बुक एनक्लेव, जयपुर, 51–57*

9. *पालीवाल, शिवनारायण, (2006), पत्रिका विरासत, पालीवाल समाज की वार्षिक पत्रिका, जोधपुर*

10. *मिश्र, अनुपम, (2004), आज भी खडे है तालाब, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 31–33*

11. *भाटिया, ओमप्रकाश, (2002), दीवान सालमसिह, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर*

12. *शर्मा, नन्दकिशोर (2002) ने "जैसलमेर का राजनैतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर*

13. *पंवार, डा.ललित कुमार (2001) ने "भारतीय रेगिस्तान मे पर्यायवरणीय पर्यटन, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर 58–65*

14. *शोध, बुलेटिन, (1992), केन्द्रीय शुष्क अनुसंधान परिषद, जोधपुर*

15. *राजस्थान जिला गजेटियर, 1977 निदेशालय जिला गजेटियर्स, राजस्थान सरकार*

16. *टाड, कर्नल, (1873), जैसलमेर का इतिहास, 35–48*